IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

शैलेश मटियानी - लोकजीवन के कथाकार

अनुजा कुमारी
शोधार्थी
भूपेंद्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय मधेपुरा, बिहार

"छोटी सी उम्र में ही बूचड़खाने में काम कर चुके शैलेश मटियानी के लिए संघर्ष जीवन में कभी कम नहीं हुए लेकिन इनके साथ ही उनकी विलक्षण लेखकीय यात्रा चलती रही"

शैलेश मटियानी के लिए राजेंद्र यादव अक्सर कहते थे, 'मटियानी हमारे बीच वह अकेला लेखक है जिसके पास दस से भी अधिक नायाब और बेहतरीन ही नहीं, कालजयी कहानियां हैं. जबकि अमूमन लेखकों के पास दो या फिर तीन हुआ करती हैं. कोई बहुत प्रतिभाशाली हुआ तो हद से हद पांच.' राजेंद्र यादव उन्हें रेणु से पहले का और बड़ा आंचलिक कथाकार कहते थे. वे कहते थे कि रेणु जब साहित्य लिख भी नहीं रहे थे तब कहानियों को तो छोड़ो, शैलेश का उपन्यास और यात्रा वृत्तांत भी छप चुका था. यह त्रासदी जैसा ही कुछ था कि इस लोकजीवन के कथाकार को उसके जीवनकाल में ही रेणु के नाम से जुड़े पुरस्कार से नवाजा गया. और यह शैलेश मटियानी की विनम्रता और सरलता थी कि उन्होंने बहुत सहजता से इस पुरस्कार को लिया था.

मुख्य कृतियाँ

- उपन्यास : गोपुलीगफूरन, चंदऔरतों का शहर, नागवल्लरी, बावन नदियों का संगम, माया-सरोवर, मुठभेड़, रामकली, हौलदार, उत्तरकांड
- कहानीसंग्रह : चील, प्यास और पत्थर, अतीत तथा अन्य कहानियाँ, भेड़ें और गड़ेरिये, बर्फ और चट्टानें, 'नाच, जमूरे, नाच'
- विविध : लेखकऔर संवेदना, त्रिज्या, मुख्यधारा का सवाल, यदा-कदा

मटियानी और राजेंद्र यादव के बीच के संबंध बड़े अनोखे थे. राजेंद्र जी अक्सर मजाकिया चर्चाओं में उन्हें दक्षिणपंथी कहते थे और बहुत तकलीफ के साथ यह भी कहते –

> 'लिखना छोड़कर इसने भाजपा के मुखपत्रों की वकालत करनी शुरू कर दी है और सब कर्म-कांडों को जायज ठहराने के नए तर्क गढ़ रहा है पर इससे कोई फायदा है? इससे उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता कि वहां कोई भी नहीं है जो इसके (शैलेश मटियानी के) इलाज के बारे में सोचे. इसकी बीमारी के लिए कुछ करे.'

मटियानी उस वक़्त अपने छोटे बेटे की हत्या के बाद हुई मानसिक अस्वस्थता और सिर के अथाह दर्द के साथ-साथ बहुत ही तंगहाली से गुजर रहे थे.

राजेंद्र यादव के इस दुख का एक बहुत बड़ा कारण शैलेश मटियानी से जुड़ी उनकी अपेक्षाएं भी थीं और उनका लगाव भी जिसे उन्होंने कभी उस तरह खुलकर स्वीकार नहीं किया. राजेंद्र जी के पास जिन लोगों के सबसे अधिक पत्र थे उनमें मटियानी भी थे और यह पत्र-व्यवहार उनका किसी से सबसे लम्बे समय तक चलनेवाला पत्र-व्यवहार भी था. बीच के समय के एक छोटे से छोटे से वक्फे को छोड़ दें तो भी उन्होंने सबसे अंतिम चिट्ठी राजेंद्र यादव को ही लिखी थी.

निर्मल वर्मा के बाद पैसों के लिए पूछनेवाले शैलेश मटियानी दूसरे लेखक थे. ये दोनों ही लेखन के द्वारा आजीविका चलाते थे और अपने समय के कद्दावर लेखक भी थे और न भी होते तो यह मांग कोई नाजायज मांग तो थी नहीं. अपने उसी पत्र में मटियानी जी ने अपने असह्य सिरदर्द से गुजरने और कुछ भी लिख-पढ़ न पाने की बात साहित्यजगत में नए आए से भी बड़ी आसानी और तफसील से कही थी. राजेंद्र

यादव से इस संदर्भ में फिर बात भी हुई. राजेंद्र यादवने कहा था पैसे उन्हें पहले ही भिजवा दीजिये, पर इससे पहले ही एक दूसरा संयोग बन पड़ा.

राजेंद्र यादव किसी गोष्ठी के लिए निकले थे और लौटते हुए रास्ता बदलकर शैलेश मटियानी जी से मिलने हल्द्वानी चले गए थे. वहां उन्होंने मटियानी जी को कुछ पैसे देने चाहे तो अपनी बुरी हालत और बीमारी के खर्चे में डूबे होने के बावजूद उन्होंने पैसे लेने से मना कर दिया. उनका कहना था कि सिरदर्द के कारण किताब-कलम पकड़ी नहीं जाती और इसलिए शायद वे लिख न पाएं. राजेंद्र जी ने उन्हें फिर समझाया कि यह उनकी हंस में आगे आनेवाली कहानी का पारिश्रमिक है. मटियानी जी ने फिर पैसे ले लिए थे. कहानी अगले सात दिन के अंदर ही डाक से हंस के दफ्तर पहुंच भी गई. कहने की बात नहीं कि कहानी कहीं से भी शैलेश मटियानी की कहानियों के बीच फिट नहीं बैठती थी. राजेंद्र जी ने तब यह कहा था कि वह किस स्थिति में है यह सोचो, और फिर यह सोचो कि इस हालत में भी उसने अपना वादा पूरा करने की खातिर कहानी भेजी है. इस कहानी का शीर्षक था, 'उपरान्त'. यह लंबी कहानी थी जो हंस के दो अंकों में, दो हिस्सों में छपी.

जैसा कि लेखक अमूमन होते हैं, 'रमेश कुमार मटियानी' पहले एक कवि थे. वे भी उसी तरह कविताएं लिखते रहे जैसे बहुत सारे लेखक अपने लेखन के शुरुआती काल में लिखते हैं. फिर उनका झुकाव गद्य-लेखन की तरफ हुआ और वे तब शैलेश मटियानी हो गए. पर वे उन अर्थों में आम लेखकों की तरह के लेखक तो कतई नहीं हो पाये जिस तरह कि सब होते हैं या कि फिर सबकी जिंदगी होती है. उन्हें और उनकी जिंदगी को देखते हुए मुक्तिबोध की यह पंक्ति हमेशा याद आती है –

> 'जो बचेगा, कैसे रचेगा?' उनकी उन्हीं प्रारम्भिक काल की कविताओं में से एक की कुछ पंक्तियां हैं - 'अपंखी हूं मैं उड़ा जाता नहीं / गगन से नाता जुड़ा पाता नहीं / हर डगर पर हर नगर पर बस मुझे / चाहिये आधार धरती का सदा / मां नहीं डरती प्रसव की पीर से / सृजन का आनंद इतना महत है / चीख उठता है जरा सी पीर से / का-पुरुष आकाश है धरती नहीं है / गोद लेकर पराई संतान को / फेंक देना नियम है आकाश का / मुझे धरती पर अडिग विश्वास है / भ्रूण- हत्या बीज का करती नहीं है.'

इस कविता का जिक्र यहां इसलिए कि आकाश और धरती को स्त्री-पुरुष की तरह बिंबित करती यह कविता दरअसल कल्पना से कहीं ज्यादा यथार्थ को महत्व देती है. वही यथार्थ जो शैलेश मटियानी के लेखन की जान रहा. इसका दूसरा मजबूत पक्ष स्त्री को स्त्री की तरह देखना है, उसकी अद्भुतताओं में, उसकी विलक्षणताओं में और उसकी सामान्यताओं में भी. 'गगन से नाता जुड़ा पाता नहीं...' आखिर कल्पना की दुनिया में कितनी देर विचरा जा सकता है. रहने-सहने और जीने के लिए हमेशा धरती की जरूरत होती है वह चाहे जितनी रपटीली हो या फिर कंकरीली-पथरीली. मटियानी और उनकी रचना प्रक्रिया और उनके जीवन को समझने के लिए यह कविता लगभग सूत्र-वाक्य जैसी ही है.

यथार्थ और यथार्थवादी लेखन शैलेश मटियानी के जीवन का मूल दर्शन है. उन्होंने जो लिखा उसे जिया और जो जिया उसे ही अपनी रचनाओं का माध्यम बनाया. खालिस लेखक होकर जीना काफी मुश्किल काम है पर शैलेश मटियानी को जानने के बाद लगता है कि यह भी आसान काम है बनिस्बत शैलेश मटियानी जैसा लेखक होने के.

मात्र 12 वर्ष की उम्र में पिता-माता दोनों को खो देनेवाले इस बच्चे ने 13 साल की नन्हीं सी उम्र में अपनी पहली कविता लिखी थी. 15 वर्ष की छोटी सी उम्र में वह अपनी पहली किताब का मालिक था. यह अलग बात है कि हाई स्कूल की शिक्षा पूरी करने में शैलेश मटियानी अपनी उम्र के 20 वर्ष खपाने पड़े. इसका कारण वह दुख और यातना भी थी जिससे उन्हें जिंदगी के हर कदम पर दो चार होना पड़ा. इस बच्चे के लिए जीवन का सफ़र कभी आसान नहीं रहा. उनके हिस्से हर कदम पर उपेक्षा और ताने थे. दरअसल माता-पिता गुजर जाने के बाद उन्हें बूचड़खाने में काम करना पड़ा था. इसमें लगे लोग पक्के जुआरी थे और लोगों के अनुसार पढ़ना-लिखना इस परिवार के लोगों का काम नहीं था.

इस किशोर ने जब कभी अपनी प्रतिभा दिखाई और उसे प्रोत्साहन मिला तो कुछ इस सूरत में –'बिशुन्वा (पिता का नाम - विष्णु) जुआरी और शेरसिंह (चाचा) बूचड़ का लौंडा कवि–लेखक बन गया है'. जुआरी और बूचड़ की औलाद होने का लेबल हमेशा उनसे चिपका रहा. विडंबना ये कि उनकी जबर्दस्त प्रतिभा भी उनके सिर से यह पट्टी नहीं हटा सकी.

सम्मान

- फणीश्वरनाथ रेणु पुरस्कार
- उत्तर प्रदेश सरकार का संस्थागत सम्मान
- शारदा सम्मान
- साधना सम्मान
- लोहिया सम्मान

मुश्किलें शैलेश मटियानी के पीछे किसी बौराए कुत्ते-सी तो तमाम उम्र ही फिरती रहीं लेकिन,1952 तक का कालखंड उनकी जिंदगी का सबसे मुश्किल दौर रहा. पहले वे पहाड़ यानी अपनी जन्मभूमि (अल्मोड़ा) से इलाहाबाद गए फिर इलाहबाद से मुजफ्फरनगर और मुजफ्फरनगर से दिल्ली और फिर दिल्ली से मुंबई पहुंचे. यह पहुंचना कुछ ऐसा नहीं रहा कि जैसे यह महज उनकी यात्रा के अगले स्टेशन या फिर पड़ाव भर हों, इन जगहों पर वे नौकरियों और मन लायक काम के तलाश में भटक रहे थे. इस दौरान कोई शहर या फिर शख्स उनका पनाहगाह नहीं बना क्योंकि उनके सिर पर बूचड़ों के घराने की मुहर लगी थी, क्योंकि तब एक साहित्यकार को हमेशा संभ्रांत कुल का न सही लेकिन मध्यम श्रेणी के किसी परिवार में तो जन्मना जरूरी था.

'पर्वत से सागर तक' नामक उनका यात्रा संस्मरण इन्हीं दिनों और दुखों की गाथा है. इसमें उनके बूचड़खाने में मांस काटने से लेकर बंबई के श्रीकृष्णपुरी हाउस में जूठे बर्तन धोने के एवज में रहने और खाने की सुविधा, मुजफ्फरनगर में एक सेठ के घर में घरेलू नौकर की तरह रहने, रेलवे स्टेशन पर की गई कुलीगिरी से लेकर पैसे के खातिर अपना खून बेचने और उस पैसे में से भी अधिक हिस्सा दलालों को सौंप दिए जाने की विवशता की कहानी है. बंबई में अपराध के दुनिया को बहुत करीब से देखे जाने का अनुभव उनके उपन्यास 'बोरीवली से बोरीबंदर' का अंश बना. 'आकाश कितना अनंत है' नामक उनका उपन्यास प्रेम के लिए और प्रेम के ख़त्म होने के साथ खुद को ख़त्म किये जाने के खिलाफ खड़ा होता है. इसे हर युग के युवाओं को जरूर पढ़ना चाहिए.

स्त्रियों के लिए एक गहरी संवेदना शैलेश मटियानी जीवन और लेखन में हमेशा मौजूद रही. प्रेयसियों को और उनके प्रेम को केंद्र में रखकर लिखने वाले तो न जाने कितने लेखक हुए, लेकिन शैलेश मटियानी अकेले लेखक हैं जो पत्नी प्रेम को अपनी कहानी का केंद्रबिंदु बनाते हैं और 'अर्धांगिनी' जैसी कहानी रची जाती है.

'चील माता' और 'दो दुखों का एक सुख' वे अन्य महत्वपूर्ण कहानियां हैं जिनके कारण उनकी तुलना मैक्सिम गोर्की और दोस्तोवस्की से की जाती रही. शैलेश मटियानी प्रेमचंद के बाद हिंदी के सबसे अधिक लिखाड़ लेखक हैं. उनके 30 कहानी संग्रह, 30 उपन्यास, 13 वैचारिक निबंध की किताबें, दो संस्मरण और तीन लोक-कथाओं की किताब इसका उदाहरण हैं. इस मामले में उनकी तुलना बांग्ला भाषा के लेखकों से की जा सकती है. हालांकि इतना लिखना एक बहुत मुश्किल काम है. नए विषयों की खोज, उसका सुंदर और प्रमाणिक निर्वाह और साथ ही दोहराव से बचाव, अगर असंभव नहीं तो कष्टकर तो है ही. लेकिन शैलेश मटियानी के यहां विषयों का दुहराव कहीं नहीं मिलता. शायद इसलिए भी कि जिंदगी उनके लिए रोज नई चुनौतियां गढ़ती रही और यह लेखक उन्हें अपनी रक्त को स्याही बनाकर लिखता रहा. उन्होंने न जीवन में कोई समझौता किया और न ही लेखन में. आम लोगों के साथ-साथ उन लेखकों को भी उनसे बहुत कुछ सीखने की जरुरत है, जिन्हें अपनी रचना की नहीं पद प्रतिष्ठा और सम्मान की ख्वाहिश है और जो इसका रोना लिए बैठे रहते हैं.

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 शैलेश मटियानी की सम्पूर्ण कहानिया
2 'नागवल्लरी'– शैलेश मटियानी
3 तीसरा सुख –शैलेश मटियानी
4 'हत्यारे'– शैलेश मटियानी की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग–3,
5 'भेंड़ें और गडरिये'–शैलेश मटियानी की सम्पूर्ण कहानियाँ, भाग–3,